संत नामदेव के सगुण-निर्गुण यात्रा की एकरूपता

जगदाले अप्पासाहेब गोरक्ष
शोधार्थी-हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला -176215

संत नामदेव सगुण विट्ठल के भक्त थे, परंतु उनपर नाथपरंपरा के संत ज्ञानेश्वराआदि भाइयों व गुरु का गहरा प्रभाव रहा है। जिससे संत नामदेव का अपना अंतःबाह्य जीवन बदलकर गया और वे 'वारकरी पंथ' के पथ प्रदर्शक बन गए। मराठी के संत सगुणोपासक होने के साथ उनपर संत ज्ञानोत्तर की भक्ति की सच्ची पहचान होने के उपरान्त वह निर्गुणउपासक हो गए। संत ज्ञानदेव वारकरी संप्रदाय के आधार स्तंभ हैं। जिस पर उन्होंने भव्य महल खड़ा किए। जिसकी छाया आज भी मराठी साहित्य और समाज पर विद्यमान है। संत ज्ञानेश्वरआदि भाई नाथ परंपरा में गोरखनाथ के शिष्य थे और बाद में संत विसोबा खेचर में दीक्षित हो गए। संत नामदेव के गुरु विसोबा खेचर थे तथा विसोबा खेचर के गुरु ज्ञानदेव थे और ज्ञानदेव निवृतिनाथ के गुरु थे। ऐसे भक्त ज्ञानराज या ज्ञानेश्वर ने निर्गुण की परंपरा के विषय में लिखा है-

आदिनाथ गुरु सकल सिद्धांताचा
मच्छीन्द्रतयाचा मुख्य शिष्य
मच्छीन्द्रा ने बांध गोरक्ष कला
गोरक्ष वल गहनी प्रति
गहनी प्रसाद निवृत्ति दातार
ज्ञानदेव सार चोलविल
ज्ञाननियाचा राजा ज्ञानेश्वर माऊली
खेचर बोलविला कृपा सिंधु
ज्ञानदेवी चरणी खेचर शरण
नामदेवा पूर्व कृपा केली
नामदेव हाथ चोखीयाचे शिरी
विठ्ठल ती अक्षर उपदशीली।[1]

संत गोरोबा कुंभार ने मिट्टी की मूर्ति से सगुण-निर्गुण को विश्लेषित करते हुए कहा है- **फिरत्या चाकावरती देशी मातीला आकार। विठ्ठला तू वेडा कुंभार।**[2] संत गोरोबा काका हर दिन मिट्टी को भिगोकर रौंध कर निराकार को भी आकर देने का कार्य मन की एकाग्रता से करते थे। इसलिए सगुण-निर्गुण एक ही है। क्योंकि अंतःकारण की एकाग्रता से निर्गुण को आकार आ जाता था। संत गोरोबा काका ने सभी संत की परीक्षा कुंभार के कच्चा–पक्का घड़ा के द्वारा अभिव्यक्त किया। जिस संत का अंतःकरण पक्का है, वह घड़ा पक्का और जिसका अंतःकरण कोरा है, वह मिट्टी का कच्चा घड़ा माना जाता था। इसमें संत नामदेव का अंतःकरण कोरा रह गया, जिन्हें मिट्टी का कच्चा घड़ा ही कहा गया। इससे प्रतीत होता है कि सगुण–निर्गुण एक ही है। संत नामदेव को सगुण से निर्गुण में परिवर्तित होने के पीछे तीन घटनाएं प्रसिद्ध हैं। संत नामदेव अपने विट्ठल की असीम भक्ति छोड़ नहीं रहे थे, उनका संत ज्ञानेश्वर तीर्थयात्रा में संवाद से संत नामदेव की चित्तवृत्ति में बदलने का प्रयास कर रहे थे। दूसरा संतत्व की परीक्षा संतमंडली द्वारा लेना, तीसरा संत नामदेव को विसोबा खेचर गुरु मिलने से एक राष्ट्रीय संतत्व प्राप्त हो गया। संत ज्ञानदेव को भागवत धर्म में बहुत भक्त मिले, पर नामदेव के समान एकनिष्ठ भक्ति रखनेवाला कोई भक्त नहीं मिला था। संत ज्ञानदेव ने स्वयं का संसार नहीं किया, बल्कि विश्व को ही अपना घर के रूप में मानकर निर्गुण ब्रह्म के स्वरूप को सर्वत्र व्यापक किया- **हे विश्वाची माझे घर।**[3] हिन्दी साहित्य में निर्गुण संतकाव्य परंपरा का श्रेय गुरु गोरखनाथ को दिया जाता है। यद्यपि शंकराचार्य ने निर्गुण उपासना को ही स्थान दिया था। हिन्दी की संतपरंपरा में निर्गुण-सगुण भक्ति की दो अलग-अलग शाखायें मानी गई हैं। सदैव जो समानांतर रूप में प्रवाहित रही है। वहीं मराठी संत कवियों ने सगुण-निर्गुण भक्ति में राम-कृष्ण का विभाजन नहीं माना है। इसके परिप्रेक्ष्य में डॉ. विनयमोहन शर्मा का कथन है-"हिन्दी साहित्य के संत साहित्य में सगुण-निर्गुण का भेद है वैसा ही मराठी का संत साहित्य सगुण-निर्गुण से परे है। यही कारण है कि मराठी में सगुण को भक्त कहकर उसमें विभेदक रेखा नहीं खींची गई है। उस ब्रह्म के सत्य को सभी पंथों के साधक को संत कहा गया है।"[4]इसी कारण मराठी में सभी भक्त जनों को संत कहा गया है। संत ज्ञानदेव की समाधि ले लेने के उपरांत संत नामदेव सगुण विट्ठल की भक्ति एवं पंढरपुर आदि सब कुछ छोड़कर दक्षिण और वाराणसी, गया की ओर आगे चलकर वे हरिद्वार आदि स्थान की यात्रा करते हैं, परंतु उनका कहीं मन नहीं लगता है। उसके पश्चात वे पंजाब के घुमान नामक स्थान पर आश्रम बनाते हैं। समीक्षक-साहित्यकारों द्वारा संत नामदेव का गुरुदासपुर जिले में घुमान के पास नाथपंथ के मठ का उल्लेख मिलता है।

संत नामदेव ने मराठी में सगुण से हिन्दी में निर्गुण की यात्रा तीर्थयात्रा के माध्यम से आरंभ की थी। उसके लिए पूर्व से ही मराठी में एक पृष्ठभूमि रही है। संत ज्ञानदेव-नामदेव के कार्य से उत्तर भारत की यात्रा से निर्गुणभक्ति की पृष्ठभूमि की एक परंपरा ही विकसित हुई। उस परंपरा का निर्वहन बाद में संत कबीर, गुरु नानक देव, सुंदरदास, रविदास, दादूदयाल,मीरा आदि भक्तों ने किया ।संत विसोबा खेचर मूलतः शैवमार्गी थे, परंतु वारकरी संप्रदाय की ओर बढ़ गए, जिसके बाद ही 'षटस्थल' नामक ग्रंथ रचना की थी।उसमें वीरशैव या लिंगायत धर्म का तत्वज्ञान अष्टवरण, पंचाचार व षटस्थल इन तीनों ग्रंथों से संबन्धित है। पंचाचार अर्थात प्राण और षटस्थल का अभिप्राय आत्मा से है। इस आत्मा को जानना ही षटस्थल-दर्शन है। भारतीय साहित्य के ग्रंथों से स्पष्ट होता है कि अपने सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई और उसके पहले ईश्वर का अस्तित्व निर्गुण स्वरूप में सर्वत्र व्याप्त था। जब ईश्वर को सृष्टि विस्तार की इच्छा निर्माण हुई तो उस इच्छा को 'लीलाविनोद' कहा गया। इस लीलाविनोद की इच्छा ही चित्त का और चित्त से ही सत-आनंद से शिवत्व का निर्माण हुआ। वही शिव, परब्रह्म, महास्थल है। शिव के दो रूप-अंग एवं लिंग हैं। 'षटस्थल' दर्शन मानव की दुष्ट प्रवृत्ति एवं अभिमान का त्याग और सत्य के शोध के लिए प्रवृत्त करता है। मनुष्य को आत्मोन्नति के छह साधन माने गए हैं। जैसे भक्तस्थल में श्रद्धा व महेश्वरस्थल में निष्ठा

और प्रसादीस्थल में ईश्वर रूप प्राप्त होता है। प्राणलिंग में देह और मन के विकार से मुक्त होने से सृष्टि शिवमय लगती है। शरणस्थल में साधक समर्पण करता है और ऐक्यस्थल ही साधक की अंतिम अवस्था में शिव के भाव का आभास होता है। उसका एक-एक स्थल ही साधना की एक-एक सीढी है। वही 'षटस्थल' दर्शन का मुख्य हेतु है। ऐसी विचारणा वीरशैव मत में ही मिलता है। संत विसोबा खेचर ने शिव और विष्णु में भेद माननेवाले समाज को शैवागम बताया। संत विसोबा खेचर की मान्यता है कि विट्ठल नाम ही तीनों लोकों में व्याप्त है- **'विट्ठल नाम भरी तीनों लोक।'**[5]

संत गोरोबा कुंभार की बनाई मिट्टी की मूर्ति एक विचार बनकर आती है। विट्ठल के सन्मुख संतमंडली एकत्रित हुईतब से वारकरी परंपरा शुरू हुई। इसका कैसा योगायोग कहा जाए, निर्गुण को ही आकार देकर सगुण की मानवसेवा करना ही संत गोरोबा कुंभार का अध्यात्म ही था। जिन्होंने मिट्टी को आकार दिया।संत गोरोबा काका ने संत नामदेव के सामने निर्गुण की भावना का अनुभव कराया था और उनका काव्य ही तत्वज्ञान एवं अद्वैत भक्ति का उत्कृष्ट परिष्कार हुआ। सम्पूर्ण विश्व का आत्मा विट्ठल को कहा गया है, वही परमात्मा है। विट्ठल की मूर्ति ही आत्मलिंग के साथ ईट पर विराजमान है और अनंत सूर्य की ज्योति के समान प्रकाशित है।

सम्पूर्ण विश्वाचा आत्म्याचा जो आत्मा। तोची हा परमात्मा विटेवरी॥
द्वादश लिंगाचे जे का आत्मलिंग। ते हे पांडुरंग विटेवरी॥
अनंत शक्तिची जी निजज्योत। तीही उभी मूर्ति विटेवरी॥
अनंत ब्रह्माचे जे कां निजब्रह्मा। ते हे प्रब्रह्म विटेवरी॥[6]

ईश्वर एक है और वह सभी के हदय में बसता है ऐसा कहा जाता है। उस तत्व की उपासना किसी ने सगुण-निर्गुण के रूप में की गई। निर्गुण उपासना सगुण उपासना में बाधा लाती है, जिसे संत गोरोबा ने निर्गुण उपासना को ही अंतिम साध्य माना है। आकार ही मूलतः कल्पना है। आकार ही भ्रमरूप से तैयार होता है। संत गोरोबा काका का आध्यात्मिक अधिकार ही सभी संत में सबसे बड़ा माना गया क्योंकि उनके अभंग से ही सगुण-निर्गुण के तत्वज्ञान का उपदेश ही संत नामदेव को प्राप्त हुआ था। जिसके उपरान्त संत नामदेव की लोकप्रियता आध्यात्मिक क्षेत्र के साथ ही सामाजिक में भी बढ़ गई। ईश्वर अपना अलग-अलग रूप धारण कर लेता है और वैसे ही ब्रह्म स्वरूप धारण नहीं करता,वह विराजमान होता है। पहले सगुण को जानने के पश्चात ही निर्गुण का अहसास होता है। विट्ठल में प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों का संगम है। इस संगम का एक तट सगुण और दूसरा निर्गुण है। इस सगुण-निर्गुण को किसी ने ब्रह्म तो किसी ने माया तथा ईश्वर का रूप मानकर व्यक्त किया है।वास्तव में ईश्वर निराकार ही है। वह माया के कारण गुणातीत जान पड़ता है, माया के कारण धर्म है। माया के द्वारा ही ईश्वर स्मरण का कार्य करता है। संत नामदेव का निर्गुण ईश्वर ही गुण से परब्रह्म रूप में आकर स्थापित हो गया।

निर्गुण गुणासी आले। परब्रह्म ठसविले॥
भक्त पुंडलिका लाधले। गौप्य केले प्रकट॥[7]

ईश्वरीय नाम-साधना ही सगुण-निर्गुण भक्ति को जोड़नेवाला है। संत नामदेव के नामस्मरण से ईश्वर का रूप आकर स्थापित हो गया।

नामाचा धारक विष्णुरूप देव। वैकुंठिचे सुख रुले पायी॥
निराकार देव आकारासी आला। भक्ति पै स्थापिला नामरूपा॥
नाममंत्र बीज जोंवरी नाही जया। तोवरी केशवदया नाही प्राप्त॥
नामा म्हणे नाम केशव केवल। जाणती प्रेमल हरिभक्त॥[8]

जब कोई मनुष्य प्रेम भजन या नाममंत्र का जप नहीं करते हैं तो उन्हें केशव की प्राप्ति कैसे हो सकती है? जैसे कोई मानव अपना शरीर पानी से स्नान करके स्वच्छ करता है,वैसे ही ईश्वरीय नामस्मरण से उसका अंतःकरण निर्मल होता है और ईश्वर का वास भक्त के मन में नित्य रहने का आभास देता है। उन्होंने मनुष्य के अपने नैतिक आचरण पर नियंत्रण रखने की बात की है। संत नामदेव ने विट्ठल को परब्रह्म माना है।

हे नामा म्हणे नाम ओमकारचे मूल। ब्रह्म केवल विटेवरी॥
नामदेवाच्या लेखी निर्गुणीचे वैभव आले भक्तिमिषे। ते हे विट्ठलवेषे ठसविले॥[9]

विट्ठल के अनुग्रह से संत नामदेव को विसोबा खेचर गुरु से अनुग्रह लेने के लिए महाराष्ट्र के औढ्या नागनाथ के मंदिर में जाते हैं। वहाँ पर संत विसोबा खेचर शिवजी की मूर्ति पर पैर रखकर संत नामदेव का ईश्वर मूर्ति के प्रति का भाव देखते हैं।

खेचर केली माव लिंगावरी देउनी पाव। पहावया भाव नामयाचा॥
नामा तेथे आला देव नमस्कारिला। देखोन बोलला वचन त्यासी॥
लिंगावरोनि चरण काढ़ाजी वहिले। दिसता वरी भले करणी न कले॥
तंव येरु बोलिला नाम्या तूँ भला। मज नाही कलला देव तुझा॥
जेठे नाही देव तेथे ठेवी पाव। सर्वज्ञ सदैव तुंची अससी॥
मीपणे भूललों मज नकलेची कांही। देव नसे ते ठायी पाय ठेवी॥
तंव नामा होय विचारिता शब्दांची कुसरी। पाहता निर्धारी सान नोहे॥
देवाविण ठाव हे बोलणेची वाव। परतोनि संदेह पडला मज॥
आपुले उमाणे उमगावे। मजसी तारावे भवसागरी॥
नामा धरी चरण अगाध तुमचे ज्ञान। आपुले नाम कोण सांगा स्वामी॥
येरू म्हणे खेचर विसा पै जाण। लौकिका मिरवीणे अरे नाम्या॥
नाम आणि रूप दोन्ही जया नाही। तोची देव पाही येर मिथ्या॥
जल स्थल आणि काष्ट हे पाषाण। पिंड ब्रह्मांड व्यापुन अणुरेणु॥
सर्वत्र साक्षभूत है जाणोंनि पाहो। खेचर म्हणे नाम्याते अवघा देवों॥[10]

संत नामदेव ने सगुण में सिर्फ विट्ठल भक्ति की बात कही है। जब ओढ़या नागनाथ के मंदिर में कोई बूढ़ा-सा व्यक्ति

शिवजी की मूर्ति पर पैर रखकर सो जाता है तो वह दृश्य संत नामदेव के अंतःकरण में दु:खी होता है। उन्होंने विसोबा खेचर को नमस्कार किया ओर बोले आपको यहाँ पर ईश्वर की मूर्ति दिखाई नहीं दी, उस पर पैर रखकर आप सो गए। इस पर विसोबा खेचर बोले नामदेव तुम्हारा भला देव मुझे समझ नहीं आया। इसलिए नामदेव तुम पैर उठाकर जहां पर ईश्वर की मूर्ति नहीं है वहाँ पर पैर रखलों परंतु नामदेव जैसे पैर उठाते थे, नीचे शिवजी की मूर्ति आती थी।जिससे शिव-विष्णु, हरि-हर एक हैं और ईश्वर सब जगह पर रहता है। यही प्रतिभासम्पन्न होता था। इस तरह का प्रसंग बाद में गुरु नानक के साथ हज़ की यात्रा के दौरान घटित होता है। संत विसोबा ने संत नामदेव का एक क्षण में ही मन जीतकर ज्ञान ही दिया। जिससे संत नामदेव को सगुण की नींद से निर्गुण की जागृति हो आयी है।संत नामदेव को गुरुदीक्षा लेने के बाद ही निर्गुण का स्वरूप जागृत हुआ। जिससे संत नामदेव को सभी प्राणियों में ईश्वर का ही वास दिखाई देने लगा था। इसके बाद संत नामदेव अपने गुरु के चरण को भूले नहीं थे। यहाँ पर हिन्दी और मराठी के काव्य की एकरूपता प्रतिपादित होती है।

ईभै बीठलु उभै बीठलु, बीठलु बिना संसारू नाही। - हिन्दी

जिकड़े पाहावे तिकडे अवघा विठोबा।[11] - मराठी

संत नामदेव के काव्य में एक ईश्वर की भक्ति का दर्शन होता है और उसके अलावा किसी दूसरे देवता को देखना पसंद नहीं करते हैं- **एका विट्ठलावाचून। न करू आणिक भजन।।**[12] संत नामदेव को गुरु मिलने का आनंद लोकों मेंतीनों व्याप्त है। यह कार्य पांडुरंग की प्रेरणा से ही सफल हो पाया था।संत नामदेव के सगुण-निर्गुण के परिप्रेक्ष्य में मराठी विद्वान डॉ.मु.श्री.कानडे का कथन है- "उस काल में नामदेव के जीवन को परिणत अवस्था प्राप्त होने से हिन्दी पद रचना का स्वरूप मधुर व प्रेमलता से होकर सगुणोपासना न रहने से निर्गुण भक्त के चिंतन में गहराई है। इस विचार का गंभीर भक्तिमार्ग के परिवर्तन से इस्लाम के पैर के नीचे बार-बार पंजाब का हिन्दू समाज के मन में धर्मनिष्ठा की ज्योति आबादीत रही और संकट के आघात से भी बुझी नहीं।"[13] संत नामदेव में सगुण-निर्गुण की दोनों प्रवृत्ति का दर्शन होता है।संत नामदेव की सगुण भक्ति से निर्गुण की एकरूपता की यात्रा मराठी से आरंभ होकर हिन्दी में आती है जो उसमें दोनों शाखा के आरंभ से होकर निरंतर प्रवाहमान रहती है। संत नामदेव ने सगुण-निर्गुण भक्ति की एकरूपता के तत्त्व को व्यक्त करते हैं। संतनामदेव ने सगुण–निर्गुण की उपासना कराकर दोनों को समान माना है।

निर्गुण-सगुण नाही ज्या आकार। होऊनी साकार तोची ठेला।।
जली जलगार दिसे जैशा परी। तैसा निराकारी साकार हा।।
सुवर्ण की धन-धन की सुवर्ण । निर्गुण सगुण यायापरी।।
ऐसा पूर्णपणे सहजी सहज। सखा केशिराज प्रगटला ।।
पांडुरंगी अंगे सर्व जाले जग। निववी सर्वांग नामा म्हणे ।।[14]

संत नामदेव के काव्य में निर्गुण भक्ति के बीज प्रफुल्लित होकर यात्रा करते हैं।

निर्गुणचा संग धरिला जो आवड़ी। तेणे केले देशधड़ी आपणासी।।
अनेकत्व नेले अनेकत्व नेले। एकले सांडिले निरंजी।।[15]

निर्गुण उपासना करनेवाला साधक ही एक ही ईश्वर की भक्ति से आकार को पाया। उसे लौकिक विश्व से दूर जाने की जाणीव होती है? निर्गुण की एक अवस्था है, एकत्व के साथ अनेकतत्व का नाश ही निर्गुण की सच्ची उपलब्धि है। एकतत्व ही एकेश्वरवाद को स्पष्ट करती है। अद्वैतवाद और भक्ति में विरोध नहीं है, अपितु भक्ति की चरमअवस्था ही अद्वैतानुभूति है। शास्त्र, पुराण, कुरान, सिद्ध, नाथ धारा के कर्मकाण्ड आदि रीतियों से सर्वथा मुक्त एक धार्मिक पंथ है। जिस पर किसी मौलवी, पंडित पर भरोसा न होकर सिर्फ अपने अनुभूत- सत्य को प्रमाणित मानता है। इस एकेश्वरवाद ने मंदिर-मठ को व्यर्थ स्वीकार कराकर अपने शरीर को मंदिर बना डाला। उसके साथ ही हिन्दू-मुस्लिम धर्म की रूढ़ियों को फटकार लगाकर आमजन के लिए सत्य एवं प्रेम का मार्ग अवलंबन किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का निर्गुणधारा के संबंध में बहुचर्चित कथन निम्नलिखित है- " यह सामान्य भक्तिमार्ग एकेश्वरवादी का एक अनिश्चित स्वरूप लेकर खड़ा हुआ, जो कभी ब्रह्मवाद की ओर ढलता था और कभी पैगम्बरी खुदावाद की ओर, यह निर्गुण पंथ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसकी ओर ले जानेवाली सबसे पहली प्रवृत्ति जो लक्षित हुई वह ऊँच-नीच और जाति-पांति के भाव का त्याग और ईश्वर की भक्ति के लिए मनुष्य मात्र के समान अधिकार का स्वीकार था।"[16] वह कोई चाहे शिव-विष्णु या राम-कृष्ण तथा रहीम के नाम से भक्ति करता है तो उसमें किसी तरह का कोई दूजा भाव नहीं होना चाहिए। इससे ही शैव-वैष्णव का वाद-विवाद'वारकरी पंथ' में आकर ही एक हो गया।

केली जैसी भक्ति शैव का वैष्णव। पाहता तो देव नाही दुजा।।
शिवविष्णु दोघे एकचित अवतार। वेदानी निर्धार हाचि केला।।
नामा म्हणे येथे दुजा नको भाव। विष्णु तोची शिव, शिव तोची विष्णु।।[17]

विश्व में एक ही ईश्वर का रूप अलग-अलग रूपों में प्रकट हुआ और संत नामदेव ने नामस्मरण की भक्ति की। कबीरदास के राम अलग हैं। 'ब्रह्मा भी अंजन है, विष्णु भी अंजन है, शिव भी, गोपी भी, पुराण भी, विद्या भी, पूजा भी, देवता भी, दान भी, वेश भी , पुण्य भी, तप भी, तीर्थ भी। एकमात्र निरंजन राम जो सबसे विलक्षण है, सबके अतीत।'[18]निर्गुण बीज ही सगुण से फल-फूल गया, जिसका मूल शाखा ही सत् नाम है। गुरु नानक देवभी सत् नाम की ही बात करते हैं।

सत्त नाम है सबतैं न्यारा। निर्गुन-सगुण शब्द –पसारा।।
निर्गुण बीज सगुण फल-फूला। साखा ज्ञान नाम है **मूला।।**
मूल गहेते सब सुख पावै। डाल-पात में मूल गवावै।।
साई मिलानी सुख दिलानी। निर्गुण-सगुण भेद मिटानी।।[19]

संत नामदेव की तरह ही गुरुनानक देव ने सगुण-निर्गुण की एकरूपता के बारे में लिखा है-

निराकार आकारू आपि निरगुण ऐका।
एक ही एक बखाननों नानक एक अनेक।।

ओआ गुरुमुख की ओर अकारा। एक हि सून परोहन हारा॥
भिन्न-भिन्न त्रैगुण बिसथारा। निर्गुण ने सरगुण हसचर॥ [20]

कबीर राम के नामस्मरण की महत्ता को उजागर करके निर्गुण-सगुण का भेद दूर करते हैं। कबीर भी सगुण-निर्गुण की एकरूपता व्यक्त करते हुए सृष्टि का मूल ओंकार को ही मानते हैं।

कहै कबीर विचारिकै, जाकै बर्न न गाँव।
निराकार और निर्गुना, है पूरन सब ठाँव॥
करता आनंद खेल लाई। ओमकारते सृष्टि उपाई॥[21]

मनुष्य बाह्य जगत की मूर्ति पूजा त्यागकर हृदय में आत्मा की पूजा करने पर निर्गुण पंथ अधिक जोर देता है। मूर्ति की पूजा या देवल में जाना उचित नहीं समझते हैं। उनका ईश्वर बाद में निराकार में व्याप्त होता है। संत नामदेव निर्गुण-सगुण की महत्ता उजागर करते हैं और दोनों को ही पूरक मानते हैं।

निरगुन आगे सरगुन नाचे, बाजै सोहग तूरा।
नामा जपे नाममंत्र। हाती न घे आणिक शस्त्रा॥
रामकृष्ण हे वस्त्रा। उच्चार इतुकेची पूरे आम्हा॥ [22]

ईश्वर नाम के लिए कोई अस्त्र-शस्त्र नहीं लगता है। जब कोई मनुष्य अपने तन-मन से ईश्वर की भक्ति करता है तो उससे ईश्वरीय तत्त्व का ही बोध होता है।जिसने ब्रह्म को जाना उसने अपने साथ ही अन्य लोगों का ही उद्धार किया।

संत नामदेव ने विठोबा की भक्ति से सभी जन के लिए एक सामान्य मार्ग का अवलंबन किया। जिससे सगुण-निर्गुण भक्ति मार्ग के समन्वय की प्रतिष्ठा से शैव-वैष्णव की एकता ही 'वारकरी पंथ' में स्थिरहुई। उसके साथ ही कृष्ण एवं राम की महिमा का गायन किया है।

अंततः उनके काव्य में समन्वय तत्त्व परिलक्षित होता गया। संत नामदेव का मराठी काव्य सगुण से मुक्त नहीं हो पाया है और हिन्दी पदावली में सगुण भक्ति की अपेक्षा निर्गुणभक्ति पर अधिक प्रभाव दिखाई देता है। संत विसोबा के द्वारा बनाई विट्ठल मूर्ति ही सगुण-निर्गुण परब्रह्म का अस्तित्व बन गई।मराठी संतकवियों ने सगुणभक्ति को प्रथम सीढ़ी के रूप में स्थान दिया है, परंतु वे बाद में निर्गुण की यात्रा की ओर बढ़ते गए। उनकी पृष्ठभूमि में वारकरी संतमंडली का बड़ा ही सहरानीय कार्य रहा है। जिससे मराठी की सगुण भक्ति से हिन्दी में निर्गुण भक्ति का आविष्कार होकर एक परंपरा ही बाद में विकसित हो गई। मराठी में सगुण-निर्गुण भक्तिमार्ग एवं ज्ञानमार्ग में कनिष्ठ-वरिष्ठ जैसा कोई भेदभाव प्रतीत नहीं होता है। हिन्दी क्षेत्र में संत एवं भक्त कहने में मतभिन्नता प्रतीत होती है। जिससे तुलसीदास तथा सूरदास को संत न कहकर भक्त ही कहा गया और नामदेव, कबीर, नानक तथा निर्गुण को संत नाम से व्यक्त किया। इस प्रभाव से संत नामदेव की सगुण से निर्गुण की एकरूपता यात्रा में मानसपटल पर होने से सगुण विट्ठल भक्ति दूर हुई और हृदय में निर्गुण राम ही रात-दिन के लिए प्रकट हुए। उसके पश्चात संत नामदेव का मराठी काव्य सगुण से मुक्त नहीं हो पाया, परंतु हिन्दी काव्य निर्गुण ही रहा है।हिन्दी के मध्ययुग में निर्गुणपंथ का श्रेय कबीर को माना जाता है,क्योंकि संत कबीर संत नामदेव के उपरांत आते हैं।

संदर्भ सूची:-

1.डॉ.प्रभाकरमाचवे-हिन्दी और मराठी का निर्गुण संत-काव्य,चौखम्भा विद्याभवन वाराणसी, वर्ष1962 पृ.175
2.रिंगण-संत विसोबा खेचर विशेषांक, अगस्त -2017, पृ.80
3.प्रो.माधवदेशपांडे -संत आणि सायन्स, अस्मिता प्रकाशन, 1970 पृ.49
4.डॉ विनयमोहन शर्मा-हिन्दी को मराठी संतों की देन, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, वर्ष 1957,पृ.6
5.रिंगण-संत विसोबा खेचर विशेषांक, अगस्त-2017, पृ.75
6.सकल संत नामदेवगाथा-महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि सांस्कृतिक मण्डल, मुंबई,वर्ष 1970,अभंग सं.383 पृ.148
7. वही, अ.1710, पृ. 665
8.वही, अ.714, पृ. 274
9. वही,अ.715 , पृ. 276
10. वही, असं.1352, पृ.561
11.रिंगण-संत विसोबा खेचरविशेषांक, अगस्त- 2017, पृ.98
12.वही, पृ.73
13.डॉ. अशोक कामत-संत नामदेव जीवन कार्य आणि मराठी-हिन्दी काव्य, गुरुकुल प्रतिष्ठा, पुणे,वर्ष 2014पृ. 82
14. सकल संत नामदेवगाथा-महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि सांस्कृतिक मण्डल, मुंबई,वर्ष,1970 अ.329, पृ. 134
15. वही, पृ.80
16.डॉ.वासुदेव सिंह-हिन्दी संत काव्य समाजशास्त्रीय अध्ययन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,पृ.1
17.डॉ.अशोक कामत-संत नामदेव जीवन कार्य आणि मराठी हिन्दी काव्य, गुरुकुल प्रतिष्ठा, पुणे 2014पृ. 175
18. डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी-कबीर,हिन्दी -ग्रंथ- रत्नाकर, मुंबई, वर्ष,1942
19. वही, पद-80,पृ.263
20.डॉ.मनमोहनसहगल-पंजाब का हिन्दी साहित्य, लीना पब्लिशर्स, पटियाला, पृ.220
21.डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी-कबीर,हिन्दी -ग्रंथ- रत्नाकर, मुंबई, वर्ष,1942 पद 82पृ.264
22. सकल संत नामदेवगाथा-महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि सांस्कृतिक मण्डल, मुंबई 1970,अभंग सं.1252 पृ.51

****